श्री महाराज जी द्वारा उपदेशों में वर्णित कुछ शिक्षाप्रद सुंदर कहानियाँ

यहाँ हम श्री महाराज जी के उपदेशों में वर्णित कुछ सुंदर और शिक्षाप्रद कहानियों को प पढ़ेंगे। ये कहानियाँ छोटी और बहुत महत्वपूर्ण ज्ञान देने वाली हैं। ये कहानियाँ सभी जनों को बहुत ही सरलता से समझ आने वाली हैं।

मनुष्य को अपना स्वरूप पहचानना चाहिये

"एक बार अकबर और बीरबल कहीं जा रहे थे। मार्ग में एक ब्राह्मण भिक्षा माँगता हुआ मिला। उसे देखकर अकबर बोला "देखो बीरबल तुम्हारी जाति तो भीख माँगने वाली है"। बीरबल ने उत्तर दिया "महाराज इसने अपने स्वरूप को नहीं पहचाना है। जब यह अपना स्वरूप पहचान जायेगा तो ऐसा काम नहीं करेगा"।

ऐसा कहकर बीरबल ने उसे अपने पास बुलाया और कहा, "मैं तुम्हें पाँच रुपये दिया करूँगा, तुम प्रतिदिन एक हजार गायत्री जपो"। ब्राह्मण प्रतिदिन एक हजार गायत्री जपने लगा। कुछ दिन में उसका मन कुछ शुद्ध हुआ और उसने सोचा "अब मैं गायत्री अपने लिये ही जपा करूँगा"। उसने बीरबल से रुपये लेना बंद कर दिया। बीरबल ने उसे दस रुपये देकर दो हजार गायत्री का जप करवाना चाहा, किंतु उसे भी उसने स्वीकार नहीं किया, और घर छोड़कर तपस्या करने चला गया।

तपस्या पूरी करके वह महान साधू बनकर दिल्ली लौट आया। धीरे-धीरे उसकी ख्याति बढ़ी। अनेक लोग उसके दर्शनों को आने लगे। अकबर भी उसकी सेवा में बहुत सी भेट लेकर उपस्थित हुआ, परंतु साधु ने अकबर की ओर देखा भी नहीं, और न उसकी भेट ही स्वीकार की। अकबर ने बीरबल से कहा "यह कैसा साधू है"? बीरबल ने उत्तर दिया "महाराज यह वही भिखारी है, परंतु अब यह अपने स्वरूप को पहचान गया है।"

यह कहानी सुनाने के बाद श्री महाराज जी ने समझाया कि मनुष्य को अपना स्वरूप पहचानने का प्रयत्न करना चाहिये, तभी उसे ज्ञान उत्पन्न होता है और वह जीव से ब्रह्म बनता है।

विश्वास से कुछ भी संभव है

एक समय की बात है चंद्रपुर का राजा विजयधर हुआ करता था। उसका विवाह कुछ बहुत ही सुंदर, युवा एवं सुशील स्त्रियों के साथ हुआ था। विद्याधरी, चंद्रमुखी तथा अन्य सभी पटरानी अति सुंदर, सुशील और युवा होने के कारण राजा विजयधर को बहुत प्यारी थीं। लेकिन उन्हीं में एक साधारण रानी भी थी। उसका नाम सुमति था। यद्यपि राजा का प्रेम सभी के लिये समान था तथापि सुमति के लिये चंद्रधर के प्रेम की झलक दिखती नहीं थी। इससे सुमति बहुत दुःख में रहा करती थी।

सुमति विचार मग्न थी। इतने ही में वहाँ एक महात्मा पधारे और उन्होंने भिक्षा माँगी। महात्मा से भिक्षा की बात सुनकर सुमति ने यथोचित भिक्षा से उनका सम्मान किया। सुमति ने महात्मा जी से आशीर्वाद माँगा और उनसे अपने पति का प्रेम पाने के लिये कोई उपाय सुझाने का आग्रह भी किया। उसने रामायण वर्णित यह चौपाई भी कही - पति वियोग सम कोई दुःख नाही। रानी से ऐसा सुनकर महात्मा जी ने उसे अपने पति के अतिरिक्त अन्य सभी ओर से अपना लगाव हटाने का सुझाव दिया।

महात्मा जी ने कहा कि वह अपना प्रेम किसी भी प्रकार के आभूषणों तथा खाद्य पदार्थों मे न लगाकर बस दिन-रात अपने पति को ही ध्यावे। महात्मा जी ने और भी कहा कि पति का प्रेम पाने के लिये सुंदर तथा विद्वान होना आवश्यक नहीं, परंतु पति पर बहुत गहरा विश्वास रखना और उसे निश्छल प्रेम करना आवश्यक है। ऐसा कहते हुए उन्होंने अपना उपदेश समाप्त किया।

रानी सुमति ने महात्मा जी की आज्ञा मानते हुए अपने व्यवहार को उनके द्वारा दिये सुझावों के अनुसार ढाला। कुछ समय पश्चात विजयधर तथा रूस के राजा के मध्य युद्ध प्रारंभ हो गया। राजा विजयधर युद्ध में विजयी रहे। रूस की राजधानी विजयधर की हो गयी। राजा ने वहाँ अपना प्रतिनिधि नियुक्त किया। उन्होंने युद्ध में विजय से प्रसन्न होकर अपनी सभी रानियों को पत्र लिखवाये, और सभी रानियों से पूछा कि क्या वे कुछ भी पसंद की वस्तु मँगवाना चाहती थीं? क्योंकि रूस में अति उत्तम वस्त्र, आभूषण और अन्यान्य सुंदर वस्तुऐं प्रचुरता में उपलब्ध थी। राजा ने सभी रानियों को यह वचन भी दिया कि वे जिस किसी वस्तु के लिये भी इच्छा करेंगी, वह अवश्य ही उन्हें उपलब्ध करा दी जायेगी। राजा द्वारा ऐसा लिखित आश्वासन पाकर सभी रानियों ने बड़ा हर्ष जताया, और अपनी-अपनी इच्छा राजा को लिख दी। परंतु जब सुमति का समय आया तो उसने पृष्ठ पर एक साधारण रेखा खींच दी, क्योंकि पढ़ी लिखी तो अधिक थी नहीं और श्रद्धा राजा के प्रति अपार थी।

सारे ही पत्र राजा को प्राप्त हुए। पत्र पढ़ने वाले ने एक-एक कर सारे पत्र राजा को सुनाने प्रारंभ किये। जब सुमति का पत्र उसके सामने आया तो वह चकित रह गया। ऐसा देखकर राजा ने उसे सुमति के पत्र का शीघ्र वर्णन करने को कहा। तब वाचक ने राजा से कहा कि सुमति ने पत्र में कुछ भी न लिखकर मात्र एक सीधी रेखा खींची है और यह बतलाया है कि उसे मात्र आप ही की आकांक्षा है। यह सुनकर राजा बहुत प्रसन्न हुआ। राजा ने अपने मंत्री को अपने राज्य की ओर प्रस्थान करने की आज्ञा दी।

अपने राज्य चंद्रपुर पहुँच कर राजा ने सभी पटरानियों को उनकी ऐच्छिक वस्तुऐं प्रदान की तथा स्वयं सुमति के साथ जाने का निर्णय किया क्योंकि सुमति ने राजा से उन्हीं की माँग की थी। जब पटरानियों को राजा के इस निर्णय का ज्ञान हुआ तो उन्हें बहुत दुःख तथा पश्चाताप हुआ। उन्होंने राजा से उनका निर्णय बदलने की प्रार्थना की और क्षमा भी माँगी। परंतु राजा ने उन सभी को यह बताकर समझाने का प्रयास किया कि वे अपने वचन से बंधे हैं और जिस रानी ने जो भी माँगा है वह उसे देना उनका परम कर्तव्य है। राजा ने आगे कहा "आप सभी पटरानियों को वह पाकर, जो कुछ आपने चाहा था, प्रसन्न होना चाहिये। मेरी कामना तो केवल सुमति ने की थी इसलिये मुझे पाने की अधिकारी तो मात्र वही है"। ऐसा कहकर राजा ने अपने वचन का पालन किया और वह सुमति के साथ अंतःपुर चले गये।

इसप्रकार जो कुछ भी भक्त चाहता है, भगवान उसे अवश्य सुलभ करा देते हैं। जो सांसारिक सुख चाहता है, उसकी गति पटरानियों जैसी होती है और जो भगवान की कामना करता है, उसकी गति सुमति जैसी होती है। अतः सभी को गहरे विश्वास के साथ भगवान की ही कामना करनी चाहिये।

निष्काम कर्म का फल

एक चक्रवर्ती राजा था। एक बार उसके राज्य में एक दूर के स्थान पर वर्षा न होने से अकाल पड़ गया। इस बात की सूचना राजा के पास भी पहुँची। राजा ने आदेश दिया की उस क्षेत्र में एक नहर खुदवा दी जाये जिससे भविष्य में अकाल पड़ने का भय न रहे।

नहर खुदनी प्रारंभ हुई। कार्य की प्रगति की सूचना प्रतिदिन राजा के पास पहुंचाई जाती थी। कार्य ठीक-ठाक चल रहा था। बस एक बात ही विचित्र हो रही थी। नहर का काम करने वालों में एक ऐसा मजदूर था जो मेहनत तो प्रतिदिन पूरी करता था, परंतु मजदूरी मिलते समय अनुपस्थित रहता था। दिन निकले, मास निकले, वर्ष निकला; परंतु उसने एक पैसा भी अपनी मेहनत के बदले में न लिया। नहर पूरी बनकर तैयार हो गई, फिर भी वह अपने पैसे लेने न आया। प्रश्न ये था कि उसकी मजदूरी का क्या किया जाये।

राजा ने सोचा कि ऐसे मजदूर के तो दर्शन् करने चाहिये, और वह स्वयं इस समस्या को सुलझाने के बहाने अपनी राजधानी से चलकर उस सुदूर स्थान पर पहुंचा। वहाँ पहुंचकर उसने उस निष्काम मजदूर को बुलवाया और उसके पैसे देने चाहे। मजदूर ने उत्तर दिया "मैं पैसे नहीं लेना चाहता। आपने अपने खजाने से इतना खर्चा करके नहर खुदवाई है, इसलिये मैंने भी अपने शरीर से थोड़ी-सी सेवा कर दी। आप ये पैसे इन मजदूरों में ही बंटवा दीजिये। मैं तो रात को अन्यत्र मेहनत करके अपना पेट भर लेता हूँ।"

महदूर के इस उत्तर से राजा पर बड़ा गहरा प्रभाव पड़ा। राजा ने मन में सोचा "ऐसा निष्काम! ऐसा धर्मात्मा! ऐसा व्यक्ति तो मेरा मंत्री बनने योग्य है"। राजा उस मजदूर को अपनी राजधानी ले गया। उसे राजा ने मंत्री बना दिया। वह मज्दूर मंत्री का कार्य करने लगा। इस पद का वेतन एक लाख रुपये वार्षिक था, परंतु वह बहुत थोड़े ही रुपये अपने खर्च के लिये लेता था। उसके वेतन का शेष सारा रुपया राजकोष में ही जमा होता था।

राजा के पास पुनः सूचना आई की लाख रुपये से कुछ कम इस धन का क्या किया जाये। राजा तो इस मंत्री को पाकर आश्चर्य चकित था। राजा सोच रहा था कि इतना अच्छा काम और लोभ का नाम नहीं! कितना धार्मिक! कितना सदाचारी! क्यों न मैं इसे ही अपने कार्य पर नियुक्त कर दूँ? इससे प्रजा को अच्छा राजा मिल जायेगा और मुझे भगवान के भजन करने का अवसर मिल जायेगा। राजा ने ऐसा ही किया और वह स्वयं एकांतवास करने लगा।

निष्काम कर्म का कैसा स्पष्ट फल है। रजा स्वयं उस मजदूर से मिलने गया, और अंत में उसे अपना ही पद दे दिया। इसी प्रकार निष्काम कर्म करने वालों से भगवान स्वयं मिलने आते हैं और अंत में उसे अपना ही पद प्रदान कर देते हैं।

आत्मा सदैव स्वतंत्र है

एक समय दो महात्मा एक साथ रहा करते थे। इनमें एक गुरू तथा दूसरा शिष्य था। शिष्य प्रतिदिन भिक्षा ग्रहण करने के लिये नगर में जाया करता था। एक दिन जब शिष्य नगर में एक साहूकार के यहाँ भिक्षा मांग रहा था, तभी उस साहूकार के यहाँ पिंजड़े में बंद एक तोते ने उस शिष्य-महात्मा से कहाः महात्मा जी आप कहाँ रहते हैं? क्या आप मुझे यहाँ से मुक्त करने का कोई उपाय बता सकते हैं? क्योंकि मैं यहाँ पिंजरे में बहुत दुःख का अनुभव करता हूँ। हाँलाकि साहूकार और उसके घर के लोग मेरा बहुत ध्यान रखते हैं, परंतु स्वतंत्रता से उसकी तुलना नहीं की जा सकती। मैं अनंत और खुले आकाश में अपने अन्य मित्रों के साथ गुलाची भरता था। विभिन्न प्रकार के पेड़ों की शाखाओं पर बैठ कर विभिन्न प्रकार के फल तथा फूलों का आस्वादन किया करता था। इस प्रकार मैं अपने

मित्रों के साथ अनन्य प्रसन्नता का अनुभव किया करता था। परंतु अब इन क्रूर पक्षी पकड़ने वाले तथा पक्षीयों को बंधन में रखने वालों से मैं दया की आशा कैसे कर सकता हूँ?

जिसे कष्ट होता है वही इसके दुःख को अनुभव कर सकता है। परंतु समय आयेगा जब इन क्रूर पक्षी पकड़ने तथा उन्हें बंधन में रखने वालों को भी इस अपराध का फल तो भोगना ही पड़ेगा। उस समय ये सभी रोयेंगे, चिल्लायेंगे, छटपटायेंगे और पश्चाताप करेंगे। परंतु आज इनके हृदय की आखें भी कैसी बंद हैं, और इन्हें मेरे बंधन का और मेरे परिवार तथा जाति से वियोग का दुःख भी अनुभव नहीं होता है। हे महात्मा जी! मैं कैसे अपने दुःखों का वर्णन आपके सामने करूँ? मेरे मन में असंख्य विचारों की लहरें उठती हैं, परंतु कोई भी विचार मुक्त होने का उपाय नहीं बन पाता। मेरे विचार में मुझे कोई आप जैसा गुरू चाहिये। मैं आपकी शरण में हूँ। कृपया मेरी सहायता कीजिये तथा कैसे भी मुझे इस बंधन से मुक्ति दिलाइये।"

इस प्रकार के करुणामय वचन सुनकर शिष्य-महात्मा ने कहाः "मैं तो तुम्हारी मुक्ति का कोई उपाय नहीं जानता। झूठ में बोलना नहीं चाहता। परंतु मेरे गुरूदेव बहुत पहुँचे हुए महात्मा हैं। मैं उनसे बात करके तुम्हें अवश्य ही कोई उपाय सुझाऊँगा।"

इस प्रकार तोते को सांत्वना देकर वह शिष्य अपने गुरू के पास पहुंचा। भिक्षा रखकर उसने गुरूजी को प्रणाम किया। उसने बेचारे तोते की पूरी कहानी भी गुरूजी को सुनाई। कहानी सुनकर पहले तो गुरूजी लोट-पोट होने लगे, तत्पश्चात निष्प्राण से होकर पृथ्वी पर लेट गये। इस दृश्य को देख शिष्य बहुत विचलित हो गया। उसने अब गुरूजी को आगे वह कहानी न सुनाने का संकल्प किया, तथा प्रयास करके गुरू को पूर्व की अवस्था में लाया।

अगले दिन वह पुनः भिक्षा के लिये नगर पहुंचा। उसी साहूकार के घर पहुंचने पर, वहाँ तोते ने शिष्य-महात्मा से गुरू द्वारा बताये उपाय को सुनाने का अनुरोध किया। तब उस शिष्य ने कहाः "भाई तुम्हारी करुण कहानी में तो पता नहीं ऐसा क्या था कि मेरे गुरू इसे सुनते ही मूर्क्षित हो गये।" बस इतना सुनते ही उस तोते ने अपने लिये गुरू का संदेश जान लिया, और उसी अनुसार व्यवहार करते हुए उसी समय मुक्ति को प्राप्त हुआ।

इस प्रकार हमारा स्वरूप तो सत्य, मुक्त और स्वतंत्र ही है। बंधन तो मात्र शरीर का है। हम सब भी भगवान को याद करते हुए और शरीर बंधन में न बंधते हुए, इस संसार में प्रसन्नता से रहकर मुक्ति पा सकते हैं।

होनी तो हो के रहे

एक बार गरुण जी का एक ब्राह्मण भक्त कहीं रहा करता था। एक दिन काल उसके पास से उसे तिरछी नजर से देखता हुआ निकल गया। यह देखकर ब्राह्मण व्याकुल होने लगा। उसने गरुण जी को मन से याद किया। गरुण जी ने तुरंत ही दर्शन दिये, और अपने ब्राह्मण भक्त से याद करने का कारण पूछा।

उस ब्राह्मण ने अपनी सारी व्यथा गरुण जी को कह सुनाई। गरुण जी ने उसे सांत्वना देते हुए कहाः "तू तनिक भी व्यथित न हो। तू मेरी पीठ पर बैठ जा, और मैं तुझे सात समुंदर पार एक पर्वत की कंदरा में छोड़े देता हूँ। वहाँ काल भी न पहुंच सकेगा।"

ऐसा कहकर गरुण जी काल के पास पहुंचे। उन्होंने काल से पूछाः "तुमने मेरे भक्त को टेढ़ी निगाह से क्यों देखा?" काल ने गरुण जी को उत्तर देते हुए कहाः "उसकी मृत्यु सात समुंदर पार एक पर्वत की कंदरा में होनी है। मैं ही उसे सांप बनकर डसूँगा। परंतु वह यहाँ बैठा हुआ था। इसलिये मैंने सोचा कि यदि मैं उसे डरा सकूँ तो वह निश्चय ही आपको पुकारेगा और तब आपही उसे सात समुंदर पार उस पर्वत की कंदरा में पहुंचा सकते हैं।"

ऐसा जानकर गरुण जी वहाँ पहुंचे और उन्होंने उस ब्राह्मण भक्त को सांप के काठने की वजह से मृत पाया। इससे सिद्ध होता है कि भगवान ने मृत्यु तथा अन्य सभी घटनाओं का समय निश्चित किया हुआ है। इसी संदर्भ में सूरदास जी की एक बहुत ही सुंदर रचना है।

तीन लोक भावी के बस में, भावी वश न परे।
सूरदास होनी सो होनी, क्यों मन सोच करे।।
करम गति टारे नाहीं टरे।

{इस रचना का अर्थ है कि प्रत्येक मनुष्य की उसके पिछले जन्म के कर्मानुसार ही गति होती है। और उसको बदलना किसी के लिये भी संभव नहीं है। पुराने कर्मों का फल तो सब ही को भोगना पड़ता है चाहे शिष्य हो अथवा गुरु। इसीलिये इन सब बातों के लिये अधिक सोच-विचार न करते हुए, बस निष्काम भाव से कर्म में लिप्त रहना चाहिए। भगवान का खूब भजन करना चाहिए। सदैव परमानंद में मग्न रहना चाहिए।}

जो होता है अच्छे के लिये होता है

सदैव ऐसा मानना चाहिए कि जो काम हमारी इच्छा के विरुद्ध हुआ है, वह भगवान द्वारा किया हुआ है और हमारे बहुत भले के लिये है।

एक राजा का वजीर ऐसा ही मानत था। उसके राजा की एक समय उंगली कट गयी। सभी सभासदों ने बहुत शोक प्रकट किया। परंतु उस वजीर ने कहाः "परमेश्वर जो करता है वह भले के लिये होता है।" यह सुनकर राजा बहुत क्रोधित हुआ, और गुप्त रूप से उसने अपने वजीर को मारने की ठान ली।

एक दिन राजा तथा वजीर शिकार के लिये गये। राजा अन्य सभी को दूर छोड़, वजीर के साथ घने जंगलों में चला गया। वहाँ उनको प्यास लगी, राजा ने वजीर को कुंए से पानी खींचने की आज्ञा दी। उसने पानी पिलाया, परंतु जब पुनः वह कुंए से पानी निकालने लगा, तो राजा ने उसे कुंए में धकेल दिया।

राजा वहाँ से चल दिया। सूर्य अस्त हो चुका था, राजा रास्ता भूल गया। वह जंगली आदमियों के गांव के पास एक बड़ के पेड़ से अपने घोड़े को बांध कर विश्राम करने की बात सोचने लगा। उसी समय ढोल बजाते हुए आदमी आये और उन्होंने राजा को पकड़ लिया। उनको देवता पर बली चढ़ाने के लिये एक मनुष्य की आवश्यकता थी। जब राजा की बली चढ़ाने लगे तब उन लोगों के पुरोहित ने कहाः "इसके कपड़े उतार कर प्रत्येक अंग का निरीक्षण करो, कोई अंग खंडित नहीं होना चाहिये।"

जब देखा गया तो उसकी उंगली कटी पायी गयी। इसपर पुरोहित ने कहाः "खंडित अंग वाले मनुष्य की बलि देवता पर नहीं चढ़ सकती।" अतः पुरोहित की आज्ञानुसार राजा को छोड़ दिया गया।

इस घटना के पश्चात राजा ने सोचा-विचारा और निश्चय किया कि उस वजीर का मत बहुत ठीक था। मेरी कटी हुई उंगली के कारण ही मेरी रक्षा हो सकी, अन्यथा तो यहाँ से बचना असंभव ही था। अब राजा कुंए के पास गया और वजीर को कुंए से बाहर निकाला। वजीर के बाहर आने पर राजा ने उससे क्षमा मांगते हुए, उसकी बात का पूर्ण समर्थन किया। परंतु साथ ही उसने एक शंका भी वजीर के सामने रखते हुए कहाः "मेरी उंगली कटी इससे मेरी बलि चढ़ने से बच गई। परंतु तुम्हें कुंए में धकेलने से तुम्हारा क्या भला हुआ?" इसपर वजीर ने उत्तर देते हुए कहाः "महाराज! यदि हम दोनों साथ में होते, तो वे लोग आप को तो अंग-भंग होने के कारण छोड़ देते और मेरी बलि चढ़ा देते।" इसीलिये कहा जाता है।

राम ज्यों राखे त्यों रहिये। जो कुछ करे भला कर मानो, कबहुं बुरा न

भगवद्-दर्शन हेतु दृढ़ इच्छा अतिआवश्यक है

एक पवित्र हृदय वाला बालक भगवान के भक्त के पास पहुँचा और उसने भक्त से कहाः "कृपया मुझे भगवान के दर्शन पाने में सहायता करें, मैं आपको अपना गुरु मानता हूँ।" वह भक्त बहुत पहुँचा हुआ नहीं था, इसलिये उसने बहुत सच्चाई से कहाः "भगवान सब जगह है, परंतु उसको पाना बहुत कठिन है।" इस उत्तर से वह बालक संतुष्ट नहीं हुआ। इसलिये उसने पुनः अपने गुरू से कहाः "नहीं, मुझे विश्वास है कि भगवान के दर्शन पाने में आप मेरी सहायता कर सकते हैं। आप मुझे कोई भी रास्ता बतलाइये जिससे कि मैं भगवान के दर्शन करने में सफल हो सकूँ।" इसपर उस भक्त ने कहाः "भगवान मथुरा-वृंदावन में रहते हैं और तुम्हें वहाँ पर ही उनके दर्शन प्राप्त हो सकते हैं।"

बालक इस सलाह को मानता हुआ मथुरा-वृंदावन की ओर चल पड़ा। लगातार दो दिनों तक वह बालक मथुरा-वृंदावन की गली-गली में भगवान की खोज में लगा रहा। उसने हर-एक व्यक्ति से भगवान के बारे में पूछताछ की, और उन सभी व्यक्तियों से उस बालक को तरह-तरह के उत्तर मिले। किसी ने कहाः "कि अवश्य एक समय था जब भगवान यहाँ रहा करते थे, परंतु अब या तो वह लोगों के हृदय में रहते हैं या अपने लोक में रहते हैं।" एक अन्य ने कहाः "वह व्यक्ति ठीक ही कह रहा है, परंतु प्रयास करने से भगवान को यहाँ पर भी पाया जा सकता है।"

वह बालक भगवान की खोज में इधर-उधर घूमता रहा। परंतु किसी से भी उसे संतोष-जनक उत्तर प्राप्त नहीं हुआ। साथ ही वह यह भी सोचता रहा कि गुरूजी गलत सलाह नहीं दे सकते। यदि उन्होंने कहा है कि भगवान मथुरा-वृंदावन में हैं, तब अवश्य ही उन्हें यहाँ होना चाहिये। मुझे जंगल आदि में भी उनकी खोज करनी चाहिये।

इस प्रकार सोचते हुए वह बालक जंगल में जा पहुँचा। परंतु वहाँ भी भगवान को न पाकर वह जंगल में ही तपस्या में लीन होकर बैठ गया। उसने भगवान को प्राप्त किये बिना वहाँ से न उठने का निश्चय किया। उसने कुछ खाया-पीया भी नहीं। तीन दिन इसी प्रकार निकल गये। तीसरे दिन एक अन्य बालक उसके पास कटोरे में दूध लेकर आया और उससे दूध पीने का आग्रह करने लगा। तब

बालक ने नवागंतुक से कहाः "मैं तो भगवान के हाथों से ही खाऊँगा-पीयूँगा, अन्य किसी से भी नहीं।" नवागंतुक के बारंबार आग्रह करने पर भी जब वह बालक उसके हाथ से कुछ भी खाने-पीने को तैयार नहीं हुआ तब अंत में नवागंतुक ने कहाः "मैं ही भगवान हूँ।"

बालक इस प्रकार के वचन सुनकर बहुत प्रसन्न हुआ। परंतु अगले ही क्षण उसने नवागंतुक से कहाः "मैं कैसे मानूँ कि आप ही भगवान हैं? जब मेरे गुरू मानेंगे कि आप भगवान हैं तभी मै मानूँगा कि आप ही भगवान हें। इसलिये आप मेरे साथ मेरे गुरू के पास चलिये।"

नवागंतुक ने कहाः "मैं तुम्हारे साथ चलूँगा, परंतु दूध तो पी लो।" तब उस बालक ने नवागंतुक के हाथ को पकड़े रहकर दूध पी लिया। तत्पश्चात् उस बालक ने नवागंतुक के हाथ को कसकर अपने हाथ में पकड़कर अपने गुरू के निवास की ओर प्रस्थान किया। वहाँ पहुँचकर वह बालक जोर से चिल्लाया "गुरूजी मैं भगवान को अपने साथ लाया हूँ। कृपया आप देखिये और बतलाइये कि यही भगवान हैं अथवा नहीं।"

गुरूजी उठे और नीचे देखकर बोलेः "अवश्य यही भगवान हैं, परंतु तुमने उनका हाथ इतने कसकर क्यों पकड़ा हुआ है।" इस प्रकार यदि किसी व्यक्ति की इच्छा दृढ़ हो तो उसके लिये कुछ भी पाना असंभव नहीं है।

बोलो सच्चिदानंद सनातन ब्रह्म की जय